REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 7 | ISSUE - 12 | SEPTEMBER - 2018

'वर्तमान संदर्भ में- कबीर काव्य का महत्व'

श्री. अनिल शिवाजी झोळ
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
अन्नासाहेब मगर महाविद्यालय, हड़पसर, पुणे -28 (महाराष्ट्र)

सारांश :

कबीर का सम्पूर्ण जीवन ही उनका संदेश है। कबीर की रचनाओं में काव्य के तीन रूप मिलते हैं-साखी, रमैनी और सबद। वे एक ही ईश्वर को मानते थे और कर्मकाँडों के घोर विरोधी थे। अवतारवाद मूर्ति-पूजा, रोजा-नमाज़, मंदिर-मस्जिद आदि को वे नहीं मानते थे। धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक भारत के लिए हमें आदर्श समाज की रूपरेखा कबीर के संदशों में मिलती है। कबीर अपने समय के क्रान्तिकारी प्रवक्ता थे। उन्होंने आडम्बरों, कुरीतियों, जडता, मूढता एवं अंधविश्वासों का तर्कपूर्ण खण्डन किया। वे अहिंसा, सत्य, सदाचार आदि गुणों के प्रशंसक थे। कबीर ने जन्म या कुलगत उच्चता के बजाय कर्म तथा विचारों की उच्चता को प्रतिष्ठा दी। उन्होंने एक आदर्श समाज का सपना देखा एवं जो वर्णभेद जैसी मानव-मानव को अलग करने वाली परम्पराओं का खण्डन किया। वे एक ऐसे वैज्ञानिक समाज की कल्पना करते हैं, जो समरसता पर आधारित हो तथा लोग विवेकसम्मत बात को ही मानें।

प्रस्तावना :

14 वीं सदी में काशी में जन्मे कबीर आजीवन समाज का मार्गदर्शन करते रहे। कबीर लोकलाज बचाने के लिए त्यागे गये तथा नीमा और नीरु मुस्लिम जुलाहा दंपत्ति द्वारा पालित पोषित पुत्र थे आजीवन संघर्ष उपरान्त उन्होंने अपना देह त्याग मगहर में किया। जो लोग जीवनभर कबीर के विरोधी थे उनकी मृत्युपरांत शव को लेकर हिन्दू-मुस्लिम आपस में उलझे। कबीर की उलटबाँसिया आगे चलकर हिन्दू संतों पीरों, फकीरों, 'गुरुग्रंथसाहिब आदि की जुबान बनी अर्थात् कबीर का सम्पूर्ण जीवन ही उनका संदेश है कबीर की रचनाओं में काव्य के तीन रूप मिलते हैं- साखी, रमैनी और सबद। साखी दोहों में, रमैनी चौपाइयों में और सबद पदों में हैं। साखी और रमैनी मुक्तक तथा सबद गीत-काव्य के अंतर्गत आते हैं। इनकी वाणी इनके हृदय से स्वभाविक रूप में प्रवाहित है और उसमें इनकी अनुभूति की तीव्रता पाई जाती है।

आज जब पूरे विश्व मे धर्म के नाम पर आतंकवाद फैला हुआ है तब कबीर के दोहों को याद करना उन्हे जीवन मे उतारना बहुत प्रासंगिक लगता है। वे एक ही ईश्वर को मानते थे और कर्मकाँडों के घोर विरोधी थे। अवतारवाद, मूर्ति-पूजा, रोजा-नमाज़, मंदिर-मस्जिद आदि को वे नहीं मानते थे। कबीर के समय मे हिंदू जनता पर धर्मातंरण का दबाव था उन्होंने अपने दोहों मे दोनो धर्मो के कर्मकाँडों का विरोध किया और ईश्वर केवल एक है इस बात को तरह तरह से लोगों को सहज भाषा मे समझाया। उन्होने ज्ञान से ज़्यादा महत्व प्रेम को दिया। –

**"पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोइ। ढाई आखर प्रेम का,
पढ़े सो पंडित होइ॥"[1]**

कबीर के समय में अवतारवाद, बहुदेववाद, मूर्तिपूजा, तीर्थाटन, छापा-तिलक आदि का बोलबाला था। कबीर ने स्पष्ट शब्दों में अवतारवाद का घोर विरोध किया है। उन्होंने कहा कि संसार में दशरथ के पुत्र को'राम' कहा जाता है, किन्तु 'राम' का मर्म ही दूसरा है- 'दशरथ सुत तिहुँ लोक बखाना, राम नाम का मरम है आना।'[2] उन्होंने राम

का ही नहीं हिन्दुओं के अन्य अवतारों का भी खण्डन किया है तथा उस परमात्मा को घट-घट वासी बताया है। अवतारवाद को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न देवी-देवताओं की मूर्ति के रूप में पूजा की जाने लगी थी और यह सर्वविदित है कि मूर्तियाँ मन्दिरों में कैद थीं और शूद्रों का प्रवेश नितान्त वर्जित था। ऐसी स्थिति में कबीर ने लोगों को मूर्तिपूजा के भ्रमजाल से निकालकर स्पष्ट कहा कि पत्थर की मूर्ति की पूजा से यदि भगवान मिलता है तो मैं पूरे पहाड़ को पूजना श्रेष्ठ समझता हूँ मूर्ति से भली तो पत्थर की बनी वह चक्की है जिससे आटा पीसा जाता है और उससे संसार का भरण-पोषण होता है। इसलिए मूर्ति पूजा का तीव्र विरोध करते हुएउन्होंने कहा है –

"पहान पूजै हरि मिले तो मैं पूजूँ पहार। तातैं यह चाकी भली पीस खाय संसार॥"[1]

आज जब जाति का बोलबाला है, तब कबीर द्वारा जातिवाद के विरुद्ध की गयी इस एकतरफा लड़ाई की याद आती है। धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक भारत के लिए हमें आदर्श समाज कीरूपरेखा कबीर के संदेशों में मिलती है। हिन्दू समाज द्वारा बहिष्कृत तथा मुस्लिम समाज द्वारा तिरस्कृत कबीर ने ईश्वरीय एकता की बात कही। उन्होंने धर्म के नाम पर भेदभाव तथा ईश्वर के नाम पर लड़ाई का तार्किक खण्डन किया। कबीर के राम निर्गुण एवं निराकार ईश्वर थे। उन्होंने उसे सबका प्रभु बताया तथा मानव धर्म की प्रतिष्ठा की। उन्होंने आस्तिकों के ईश्वर, ईश्वरीय ग्रंथ, उपासना स्थल तथा अनुयायियों के नाम पर विभेद को नकारा तथा धार्मिक समन्वय की अवधारणा प्रतिपादित की। आज के धार्मिक वैमनस्य के वातावरण में कबीर के विचार प्रासंगिक हैं कि'हिन्दू उसे राम कहता है। मुसलमान खुदा कहता है। तू उसकी परवाह न कर तब काबा काशी हो जाएगा और राम रहीम हो जाएगा।' यही कारण है कि जब कबीर की मृत्यु हुई तब उनके शव पर दावा प्रत्येक धर्मानुयायी ने किया तथा मगहर में उसका स्मारक धार्मिक समन्वय की मिसाल है। कबीर अपने समय के क्रान्तिकारी प्रवक्ता थे। उन्होंने आडम्बरों, कुरीतियों, जड़ता, मूढ़ता एवं अंधविश्वासों का तर्कपूर्ण खण्डन किया। कबीर का अपने युग के प्रति यथार्थ बोध इतना था कि उन्होंने हर एक परम्परा, रूढ़, कुरीति तथा पाखण्ड को यथार्थ के धरातल पर खारिज किया। अतः उन्होंने व्यक्ति को जन्म के आधार पर नहीं, कर्मों और गुणों के आधार पर श्रेष्ठ माना है। -

"जाति न पूछो साध की, पूछ लीजिए ज्ञान। मोल करो तलवार का पड़ा रहन दो म्यान॥"[2]

छुआछूत जाति व्यवस्था को और भी अधिक पुष्ट करती है, जिससे मनुष्य-मनुष्य के बीच भेदभाव की खाई और भी अधिक चौड़ी होती है। कबीर इस व्यवस्था को सिरे से खारिज करते हैं तथा छुआछूत करने वाले व्यक्तियों को कठघरे में खड़ा कर उनसे सीधे-सीधे सवाल करते हैं –

"काहे कौ कीजे पांडे छोति बिचारा। छोतिहि तैं उपना सब संसारा॥
हमारे कैसे लोहू तुम्हारे कैसे दूध। तुम कैसे ब्राह्मण पांडे हम कैसे सूद॥"[3]

कबीर का यह यक्ष प्रश्न हमें सोचने को विवश करता है कि जब सब मनुष्य एक ही ज्योति से उत्पन्न हुए है तो फिर यह छुआछूत और ऊँच-नीच का भेदभाव क्यों ? कबीर का यह आक्रोश स्वाभाविक है, क्योंकि ऐसी कुत्सित सोच समाज को पतन की ओर धकेलती है। इसी कारण सदियों से भारतीय समाज के खण्ड-खण्ड टुकड़े हुए हैं तथा हम प्रगति पथ की ओर अच्छी तरह नहीं बढ़ पाये हैं। जाति-पाँति की तरह हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य आज भी बड़ी समस्या है। कबीर एक ओर हिन्दुओं को तो दूसरी ओर मुसलमानों को समझाते हुए कहते हैं कि जब पूरे जगत् का स्वामी एक ही है तो दोदो जगदीश कहाँ से आये। अल्लाह, राम, रहीम, केशव, हरि, हजरत ये ईश्वर के ही पर्यायवाची नाम हैं। उन्होंने उदाहरण देकर समझाया है कि जिस प्रकार एक ही सोने से बने विभिन्न प्रकार के गहनों के अलग-अलग नाम होते हैं, उसी प्रकार अपनी सुविधा और आस्था की दृष्टि से हम भगवान के भी अलग-अलग नाम धरते हैं। इसलिए उसकी पूजा करो या नमाज पढ़ो, कोई फर्क नहीं पड़ता। इस सम्बन्ध में यह पद द्रष्टव्य है–

"दुई जगदीश कहाँ ते आये, कहुँ कौन भरमाया।
अल्लाह राम, करीम, केसो, हरि हजरत नाम धराया॥"[4]

कबीर को शांतिमय जीवन प्रिय था और वे अहिंसा, सत्य, सदाचार आदि गुणों के प्रशंसक थे। वो पराये दोष देखने से पहले अपने दोष देखने की बात कहते थे।– "दोस पराये देखि करि, चल्या हसंत हसंत। अपने याद न आवई, जिनका आदि न अंत॥"[७] ये दोहा आज के संदर्भ मे बहुत प्रसंगिक है। राजनैतिक दलों पर ये बहुत सटीक बैठता है, जब कोई नेता विरोधी दल की किसी बुराई की ओर इंगित करता है सामनेवाला आरोप का उत्तर न देकर आरोप लगाने वाले कटघरे मे खड़ा कर देता है। स्वस्थ आलोचना कोई स्वीकार नहीं करता, जबकि स्वस्थ आलोचना का बहुत लाभ है।–

"निंदक नेड़ा राखिये, ऑगणि कुटी बंधाइ। बिन साबुन, पानी बिना, निरमल करे सुभाइ॥"[८]

आजकल राजनैतिक दलों के नेता बिना सोचे समझे बयानबाज़ी कर देते हैं संचार के युग मे बात कहाँ से कहीं तुरन्त पहुंच जाती फिर वो सफ़ाई देते रहते हैं कि उनका ये मतलब नहीं था बात को संदर्भ से अलग करके तोड़ मोड़ के पेश किया गया। उनके वक्तव्य का मक़सद किसी की भावनाओं को ठेस पहुंचाना नहीं था इसलिए कबीर ने कहा था कि बहुत सोच समझ कर मुंह से बात निकालनी चहिए। आजकल धन दौलत ऐशो आराम के साधनो की दौड़ मे व्यक्ति सही ग़लत का अंतर भूल चुका है इसलिए ये भ्रष्टाचार चोरी डकैती तथा दूसरे अपराध बढ़ रहे हैं। कबीर धन का महत्व मानते हैं पर बस इतना सा-

"साईं इतना दीजिए, जा में कुटुम समाय, मैं भी भूखा ना रहूँ, साधू ना भूखा जाय॥"[९]

कबीर ने जन्म या कुलगत उच्चता के बजाय कर्म तथा विचारों की उच्चता को प्रतिष्ठा दी। उन्होंने एक आदर्श समाज का सपना देखा एवं जो वर्णभेद जैसी मानवमानव को अलग करने वाली परम्पराओं का खण्डन किया। वे कहते हैं –

"ऊंचे कुल का जनमियाँ, करनी ऊँच न होइ। सोबन कलश सुरै भरया, साधू निंदया सोई॥"[१०]

पथभ्रष्ट समाज को उचित मार्ग पर लाना ही उनका प्रधान लक्ष्य है। कथनी के स्थान पर करनी को, प्रदर्शन के स्थान पर आचरण को तथा बाह्यभेदों के स्थान पर सब में अन्तर्निहित एक मूल सत्य की पहचान को महत्व प्रदान करना कबीर का उद्देश्य है। हिन्दू समाज की वर्णवादी व्यवस्था को तोडकर उन्होंने एक जाति, एक समाज का स्वरूप दिया। कबीर-पंथ में हिन्दू और मुसलमान दोनों के लिए स्थान है। जाति प्रथा के मूलाधार वर्णाश्रय व्यवस्था पर गहरी चोट करते हुएकहा है.......

"एक वून्द एकै मल मूतर, एक चाम एक गूदा। एक जोति में सब उत्पनां, कौन बाह्मन कौन सूदा॥"[११]

कबीर एक ऐसा समाज चाहते थे, जिसमें ऊँच-नीच, जाति-वर्ण, हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य न हो तथा धर्माधिकारी मिथ्याचारों व अंधविश्वासों में लोगों को फँसाये नहीं। वे एक ऐसे वैज्ञानिक समाज की कल्पना करते हैं जो समरसता पर आधारित हो तथा लोग विवेकसम्मत बात को ही मानें। इसलिए प्रपंचों से दूर वे निर्गुणनिराकार परमब्रह्म की आराधना पर बल देते हैं, जहाँ किसी धर्म, जाति या लिंग का भेदभाव नहीं तथा ब्राह्याचारों को तो तनिक भी स्थान नहीं हो। कबीर एक संत कवि ही नहीं महान् विचारक भी हैं जो अपने समय और समाज की समस्याओं से टकराते हैं तथा तत्कालीन सामाजिक-धार्मिक अन्तर्विरोधों को एक चुनौती के रूप में देखते हैं एवं उनका युक्ति-युक्त समाधान भी देते हैं। उनकी वाणी में विवेकजन्य करुणा है, क्योंकि वह बुद्ध की तरह समाज को दुःखों के बंधन से मुक्ति दिलाना चाहते हैं। इसलिए कबीर लोगों से सभी तरह के प्रपंचों को छोडकर आध्यात्मिक धरातल पर प्रेम-पंथ की ओर चलने का आग्रह करते हैं। जहाँ आज मनुष्य इतना आपाधापी युक्त हो गया है कि समस्त संवेदनाएँ ही खत्म होती जा रही हैं। ऐसे में कबीर का आध्यात्मिक प्रेम-पंथ हमें जीने की सच्ची राह दिखाता है। कबीर अपनी वाणी के माध्यम से उच्चतर मानवीय मूल्यों का संधान करते हैं तथा खुली राह खडे होकर अपने साथ चलने का आह्वान करते हैं–

"कबीरा खडा बाजार में, लिये लुकाठी हाथ। जो घर जारै आपना, चले हमारे साथ॥"[१२]

निष्कर्ष :

कबीर काव्य पर विचार करने से यह समझ में आता है कि उसके अनेकानेक पक्ष है, किन्तु यहां हमने केवल उनकी सामाजिक प्रासंगिकता के जिन विभिन्न पहलुओं पर जो विचारविमर्श किया है, उससे यही प्रतीत होता है कि कबीर का अपने जीवनानुभवों से प्रसूत 'आँखिन देखी' बात में पूर्ण विश्वास है। पोथियों में लिखी बातों पर वे प्रश्न चिह्न खडा करते हैं। वे एक ऐसे प्रचेता हैं जिनका पग-पग मानवीय प्रेम, करुणा, शील, क्षमा, दया और संतोष से भरा पडा है । उन्होंने धार्मिक-सामाजिक कर्मकाण्डों, मिथ्याचारों, वर्णजाति, साम्प्रदायिकता आदि के विरुद्ध पूरे साहस के साथ प्रखरता से प्रहार किया है । ये बातें उनके व्यक्तित्व को निखार कर उन्हें निर्भय क्रांतिकारी व्यक्तित्व का दर्जा देती है। वस्तुतः वे चिंताकुल कवि हैं जिन्हें सामाजिक विसंगतियाँ उद्वेलित करती हैं। इसलिए वे उच्चतर मानवीय मूल्यों एवं आचरण की प्रतिष्ठा के लिए इतने मुखर होकर संवाद करते हैं। यहां पर हम निश्चित रूप से यह कह सकते हैं कि वर्तमान संदर्भ में कबीर काव्य का महत्व अनन्य साधारण है ।

संदर्भ सूची:-

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली-4, मुकुंद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-340
2. कबीर ग्रंथावली, डॉ.श्यामसुंदर दास, विश्व भारती प्रकाशन, नागपुर, पृष्ठ-31
3. कबीरदास: सृष्टि और दृष्टि, डॉ. शिवाजी देवरे, गरिमा प्रकाशन, कानपुर, पृष्ठ-112
4. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली-4, मुकुंद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-450
5. कबीर ग्रंथावली, डॉ. श्यामसुंदर दास, विश्व भारती प्रकाशन, नागपुर, पृष्ठ-43
6. आज का सामाजिक संकट और संत कबीर साहित्य की पहल, संपा. डॉ. बलवीर सिंह, संजय बुक सेंटर, वाराणसी, पृष्ठ-183
7. कबीर ग्रंथावली, डॉ.श्यामसुंदर दास, विश्व भारती प्रकाशन, नागपुर, पृष्ठ-130
8. वही, पृष्ठ-130
9. आज का सामाजिक संकट और संत कबीर साहित्य की पहल, संपा. डॉ. बलवीर सिंह, संजय बुक सेंटर, वाराणसी, पृष्ठ-69
10. वही, पृष्ठ-223
11. कबीरदास: सृष्टि और दृष्टि, डॉ. शिवाजी देवरे, गरिमा प्रकाशन, कानपुर, पृष्ठ-126
12. आज का सामाजिक संकट और संत कबीर साहित्य की पहल, संपा. डॉ. बलवीर सिंह, संजय बुक सेंटर, वाराणसी, पृष्ठ-127

श्री. अनिल शिवाजी झोळ
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, अन्नासाहेब मगर महाविद्यालय, हड़पसर, पुणे -28 (महाराष्ट्र)